[2021] 10 एस.सी.आर. 1105

उड़ीसा राज्य और अन्य

बनाम

सखी बेवा (मृत) कानूनी प्रतिनिधियों के माध्यम से

(सिविल अपील संख्या 6490/2014)

23 नवंबर, 2021

[एम. आर. शाह और संजीव खन्ना, न्यायमूर्ति]

शहरी भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) निरसन अधिनियम, 1999 - धारा 3 और 4 - की प्रयोज्यता - शहरी भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) अधिनियम 1976 के तहत भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही - सक्षम प्राधिकरण के साथ-साथ अपीलीय प्राधिकरण द्वारा विचाराधीन भूमि को खाली भूमि घोषित किया गया था - अधिकारियों के आदेशों के खिलाफ रिट याचिका गैर-अभियोजन के लिए खारिज कर दी गई थी - बहाली का आवेदन यह कहते हुए खारिज कर दिया गया कि यदि अनुमति हो तो नई याचिका दायर की जा सकती है - ताजा रिट याचिका उच्च न्यायालय ने अंतरिम आदेश द्वारा निर्देश दिया कि अधिकारी खाली अधिशेष भूमि का कब्जा ले सकते हैं - राज्य ने यह रुख अपनाया कि अधिशेष भूमि का कब्जा पहले ही 25.04.1988 को ले लिया गया था। - हालांकि, उच्च न्यायालय ने इस आधार पर याचिका को स्वीकार कर लिया कि 1976 के अधिनियम को निरस्त कर दिया गया था और अधिशेष भूमि के लिए मुआवजे का भुगतान नहीं किया गया था - राज्य ने सर्वोच्च न्यायालय में अपील दायर की – अभिनिर्धारित: 1999 के अधिनियम की धारा 3 और 4 के मद्देनजर कार्यवाही को समाप्त घोषित करने से पहले, इस पर विचार किया जाना चाहिए और यह तय किया जाना चाहिए कि क्या अधिशेष भूमि का कब्जा सरकार द्वारा लिया गया है - इस तरह के कब्जे के अभाव में, कार्यवाही को समाप्त घोषित नहीं किया जा सकता है - विवादित फैसले में उच्च न्यायालय विचार करने में विफल रहा है और कब्जे के पहलू पर कोई विशिष्ट निष्कर्ष नहीं दिया है - मुआवजे का भुगतान करने में विफलता, कब्जे की विफलता के रूप में अनुमान नहीं लगा सकती है - नए सिरे से निर्णय लेने के लिए मामला उच्च न्यायालय को भेज दिया गया - उच्च न्यायालय को नई रिट याचिका की स्थिरता पर विचार करने का भी निर्देश दिया गया है क्योंकि पिछली रिट याचिका को गैर-अभियोजन के लिए खारिज कर दिया गया था।

अपील को अनुमति प्रदान करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित: 1. **उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित निर्णय और आदेश कानून के साथ-साथ तथ्यों पर भी टिकाऊ नहीं है। यह विवादित नहीं किया जा सकता है कि आक्षेपित निर्णय और आदेश में उच्च न्यायालय ने मामले के गुणागुण पर बिल्कुल भी विचार नहीं किया है और सक्षम प्राधिकारी द्वारा दिनांक 01.03.1984 को पारित आदेश और प्रथम अपीलीय न्यायालय-राजस्व बोर्ड द्वारा दिनांक 05.05.1987 को पारित आदेश को केवल इस आधार पर निरसित और अपास्त कर दिया है कि अधिनियम, 1976 निरसित किया गया है और अधिशेष भूमि के लिए प्रतिकर का भुगतान नहीं किया गया है। उच्च न्यायालय ने नोट किया है कि निरसन अधिनियम, 1999 को अपनाने वाले प्रस्ताव में यह घोषित किया गया है कि उन भूमि के लिए कोई मुआवजा नहीं दिया जाना चाहिए, जिनका कब्जा अधिनियम, 1976 की धारा 10 (3) के तहत निहित होने के बाद राज्य सरकार द्वारा नहीं लिया गया है और उक्त अधिनियम के तहत शुरू की गई कानूनी प्रक्रिया को भी बंद कर दिया जाएगा। [अनुच्छेद 4]**

2. उच्च न्यायालय ने निरसन अधिनियम, 1999 की धारा 3 और 4 की उचित रूप से सराहना और विचार नहीं किया है। निरसन अधिनियम, 1999 की धारा 3 और 4 के निष्पक्ष पठन से यह स्पष्ट होता है कि निरसन अधिनियम, 1999 के प्रारंभ से ठीक पहले किसी न्यायालय, अधिकरण या अन्य प्राधिकारी के समक्ष लंबित मूल अधिनियम (अधिनियम, 1976) के अधीन किए गए या किए जाने वाले किसी आदेश से संबंधित सभी कार्यवाहियां समाप्त हो जाएंगी। निरसन अधिनियम की धारा 4 लागू नहीं होगी बशर्ते कि भूमि का कब्जा राज्य सरकार या राज्य सरकार द्वारा इस संबंध में या सक्षम प्राधिकारी द्वारा विधिवत अधिकृत किसी व्यक्ति द्वारा ले लिया गया हो। इसलिए, यदि अधिशेष भूमि/भूमि का कब्जा राज्य सरकार या राज्य सरकार द्वारा इस संबंध में या सक्षम प्राधिकारी द्वारा विधिवत अधिकृत किसी व्यक्ति द्वारा लिया गया है, तो उस मामले में, मूल अधिनियम, 1976 के तहत किए गए किसी आदेश से संबंधित कार्यवाहियां समाप्त नहीं होंगी, जिसका अर्थ है कि निरसन अधिनियम, 1999 उस भूमि के संबंध में उन सभी कार्यवाहियों को प्रभावित नहीं करेगा, जिसका कब्जा लिया गया है। इसलिए, निरस्तीकरण अधिनियम, 1999 की धारा 3 और 4 को ध्यान में रखते हुए कार्यवाही को समाप्त घोषित करने से पहले, इस बात पर विचार किया जाना चाहिए और यह तय किया जाना चाहिए कि अधिशेष भूमि/भूमि का कब्जा राज्य सरकार या किसी व्यक्ति द्वारा लिया गया है या नहीं। यदि यह पाया जाता है और अभिनिर्धारित किया जाता है कि अधिशेष भूमि का कब्जा ले लिया गया है, तो उस मामले में कार्यवाही को समाप्त घोषित नहीं किया जाएगा। [अनुच्छेद 4.1 और 4.2]

3. वर्तमान मामले में, आक्षेपित निर्णय और आदेश में, उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने 25.04.1988 को तहसीलदार द्वारा कब्जा किए जाने पर बिल्कुल भी विचार नहीं किया है और/या कोई विशिष्ट निष्कर्ष नहीं दिया है। इस पहलू पर कोई चर्चा नहीं है कि कब्जा तहसीलदार द्वारा लिया गया है या नहीं। ऐसा प्रतीत होता है कि केवल इस आधार पर कि मुआवजे का भुगतान नहीं किया गया है और अंतरिम आदेश चल रहा था, उच्च न्यायालय ने सक्षम प्राधिकरण के साथ-साथ प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित आदेशों को रद्द कर दिया है। हालांकि, उच्च न्यायालय ने इस तथ्य की उचित रूप से सराहना नहीं की है और इस पर विचार नहीं किया है कि मुआवजे के भुगतान का कब्जा लेने से कोई लेना-देना नहीं है। अधिनियम, 1976 के तहत मुआवजे का भुगतान और अधिनियम, 1976 की धारा 10 (3)/10 (5) के तहत जारी अधिसूचना के बाद कब्जा लेना, दोनों अलग-अलग और अलग हैं। यह मानते हुए भी कि मुआवजे का भुगतान नहीं किया गया है, उस मामले में भी, यह नहीं माना जा सकता है कि कब्जा नहीं लिया गया था। [अनुच्छेद 4.3 और 4.4]

4. उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने भी दिनांक 24.07.2002 के प्रस्ताव/अधिसूचना को गलत तरीके से पढ़ा और गलत व्याख्या की है। दिनांक 24.07.2002 के उक्त स्पष्टीकरण के अनुसार ऐसी भूमि के लिए, जिसका कब्जा शहरी भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) अधिनियम, 1976 की धारा 10 (3) के अधीन निहित होने के पश्चात् सरकार द्वारा नहीं लिया गया है, कोई प्रतिकर नहीं दिया जाना चाहिए और उक्त अधिनियम के अधीन आरंभ कीगई विधिक प्रक्रिया भी बंद की जानी है। खंड (ii) के अनुसार जहां भूमि का कब्जा ले लिया गया है और मुआवजे का भुगतान नहीं किया गया है या आंशिक रूप से भुगतान नहीं किया गया है, मुआवजे के भुगतान के लिए कदम उठाए जाने चाहिए। इसलिए, दिनांक 24.07.2002 के उक्त स्पष्टीकरण के अनुसार भी, जहां भूमि का कब्जा ले लिया गया है और मुआवजे का भुगतान नहीं किया गया है या पक्ष को भुगतान नहीं किया गया है, मुआवजे के भुगतान के लिए कदम उठाए जाने की आवश्यकता थी। यह नहीं कहता है और/या स्पष्ट करता है कि यदि मुआवजे का भुगतान नहीं किया जाता है, तो कब्जा नहीं लिया गया है और/या अधिनियम, 1976 के तहत शुरू की गई कानूनी प्रक्रिया को बंद कर दिया जाएगा। उच्च न्यायालय ने दिनांक 24.07.2002 की स्पष्टीकरण अधिसूचना और यहां तक कि दिनांक 05.04.2002 के संकल्प को गलत तरीके से पढ़ा और गलत व्याख्या की है। [अनुच्छेद 4.4 और 4.5]

5. यहां तक कि उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने भी दिनांक 10.06.1994 के अंतरिम आदेश पर अपनी वास्तविक भावना में विचार नहीं किया है। दिनांक 10.06.1994 के एकतरफा अंतरिम आदेश में, उच्च न्यायालय ने आदेश दिया है कि अधिकारी खाली अधिशेष भूमि का कब्जा ले सकते हैं, लेकिन अदालत के अगले आदेश तक भूमि की प्रकृति या चरित्र को नहीं बदलेंगे। अंतरिम आदेश, जैसा कि कहा गया है, कब्जे के सवाल पर किसी भी तरह से निर्णायक सबूत नहीं है। [अनुच्छेद 4.6]

6. यहां तक कि विवादित निर्णय और आदेश में, उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने कहा है कि चूंकि अधिनियम, 1976 को निरस्त कर दिया गया है, इसलिए मूल रिट याचिकाकर्ताओं की भूमि उन्हें वापस दी जाएगी। अर्थात्, यह कहा जा सकता है कि उच्च न्यायालय के अनुसार भी अधिशेष भूमि का कब्जा मूल रिट याचिकाकर्ताओं के पास नहीं था। जबकि, यह अवलोकन इस बात का निष्कर्ष नहीं है कि कब्जा लिया गया था या नहीं। जो भी हो, क्योंकि उच्च न्यायालय ने याचिका पर गुण-दोष के आधार पर बिल्कुल भी विचार नहीं किया है, उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित निर्णय और आदेश को कायम नहीं रखा जा सकता है और यह रद्द किए जाने और अलग रखे जाने के योग्य है और रिट याचिका को नए सिरे से निर्णय लेने के लिए उच्च न्यायालय को भेज दिया जाना चाहिए। यह सवाल कि क्या अधिकार को आदिम होने के कारण लिया गया था, इसकी गहनता और गहनता से जांच की जानी चाहिए। [अनुच्छेद 4.7]

7. उच्च न्यायालय को पश्चातवर्ती रिट याचिका की स्थिरता पर राज्य की ओर से प्रस्तुतियों पर भी विचार करना है क्योंकि पूर्ववर्ती रिट याचिका मूल क्षेत्राधिकार मामला सं. 2550/1987 को गैर-अभियोजन के लिए खारिज कर दिया गया था जिसमें सक्षम प्राधिकारी द्वारा दिनांक 01.03.1984 को पारित आदेश और राजस्व बोर्ड द्वारा दिनांक 05.05.1987 को पारित आदेश भी चुनौती के अधीन थे जो मूल क्षेत्राधिकार मामला सं. 4048/1994 होने वाली पश्चातवर्ती रिट याचिका का भी विषय था। उच्च न्यायालय को पुनर्स्थापना आवेदन में पारित आदेश में उच्च न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों पर भी विचार करना है, जो कि मूल क्षेत्राधिकार मामले संख्या 2550/1987 को पुनर्स्थापित करने के लिए दायर 1994 के मिसेलेनियस न्यायिक मामले संख्या 10 हैं, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने पुनर्स्थापना आवेदन को इस अवलोकन के साथ खारिज कर दिया कि मूल रिट याचिकाकर्ता एक नई याचिका दायर कर सकता है, यदि अनुमत हो। इसलिए, उच्च न्यायालय की खंड पीठ को "यदि अनुमत हो" अभिव्यक्ति की व्याख्या और उस पर विचार करना होगा। [अनुच्छेद 5]

सिविल अपील क्षेत्राधिकार: सिविल अपील सं. 6490/2014।

मूल क्षेत्राधिकार मामला सं 4048/1994 में कटक में उड़ीसा उच्च न्यायालय के दिनांक 30.07.2009 के निर्णय और आदेश से।

सिबो शंकर मिश्रा, अपीलार्थियों के अधिवक्ता।

डॉ. मेनका गुरुस्वामी, वरिष्ठ अधिवक्ता, सुश्री प्रवीण गौतम, पवन शुक्ला, राजा राम, अमन एस. शर्मा, प्रणव मोंगा, प्रत्यार्थियो के अधिवक्ता।

न्यायालय का निर्णय सुनाया गया

एम. आर. शाह, न्यायमूर्ति

1. मूल अधिकारिता मामले संख्या 4048/1994 में उड़ीसा उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 30.07.2009 के आक्षेपित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट महसूस करते हुए, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थियों द्वारा यहाँ प्रस्तुत की गई उक्त रिट याचिका को अनुज्ञात किया है –

2. संक्षेप में वर्तमान अपील की ओर ले जाने वाले तथ्य इस प्रकार हैं:-

2.1. कि अधिनियम, 1976 के प्रावधानों के तहत कार्यवाही मूल रिट याचिकाकर्ता संख्या 1-सखी बेवा की होल्डिंग्स के संबंध में शुरू की गई थी। दिनांक 01.03.1984 के आदेश द्वारा, अधिनियम, 1976 के अधीन सक्षम प्राधिकारी ने एसी. 0.865-7 को अतिरिक्त खाली भूमि घोषित किया। अधिनियम, 1976 की धारा 9 के अधीन अंतिम विवरण 27.03.1984 को जारी किया गया था।

2.2 इसके पश्चात् अधिनियम, 1976 की धारा 10 (1) के अधीन अधिसूचना 30.04.1984 को अतिरिक्त खाली भूमि घोषित भूमि के संबंध में जारी की गई थी। मूल भूमि मालिकों ने मई, 1984 के महीने में अपीलीय प्राधिकरण के समक्ष अपील दायर की। अधिनियम, 1976 की धारा 10 (3) के अधीन एक घोषणा 26.10.1984 को प्रकाशित की गई थी। इसके पश्चात् सक्षम प्राधिकारी ने अधिनियम, 1976 की धारा 10 (5) के अधीन दिनांक 30.11.1984 को प्रत्यर्थियों - मूल भूस्वामियों को अतिरिक्त खाली भूमि का खाली कब्जा तहसीलदार को देने के लिए सूचना भेजी।

2.3 कि एसी. 0.865-7 भूमि को अतिरिक्त खाली भूमि घोषित करने वाले सक्षम प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध मूल भूस्वामियों द्वारा अपील की गई थी, जिसे राजस्व बोर्ड-अपीलीय न्यायालय द्वारा दिनांक 05.05.1987 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था।

2.4 कि राज्य के अनुसार तहसीलदार, सदर, कटक ने 25.04.1988 को भूमि का कब्जा ले लिया है। प्रत्यर्थियों-मूल रिट याचिकाकर्ताओं ने उच्च न्यायालय के समक्ष दिनांक 01.03.1984

के सक्षम प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश के साथ-साथ प्रथम अपीलीय न्यायालय-राजस्व बोर्ड द्वारा पारित आदेश को चुनौती देते हुए 1987 का मौलिक क्षेत्राधिकार मामला संख्या 2550 के रूप में एक रिट याचिका दायर की। उक्त रिट याचिका को 01.11.1991 को गैर-अभियोजन के लिए खारिज कर दिया गया। लगभग तीन वर्षों की अवधि के बाद 1994 का विविध न्यायिक मामला संख्या 10 के रूप में एक बहाली आवेदन दायर किया गया था। लेकिन डिवीजन बेंच ने इसे यह कहते हुए खारिज कर दिया कि देरी के आधार संतोषजनक नहीं हैं और देरी को माफ करने और बर्खास्तगी के पहले के आदेश को रद्द करने का कोई औचित्य नहीं है। हालांकि, डिवीजन बेंच ने कहा कि अगर अनुमति हो तो याचिकाकर्ता एक नई याचिका दायर कर सकता है।इसके पश्चात् उत्तरदाताओं ने उच्च न्यायालय के समक्ष 1994 का मौलिक अधिकारिता मामला सं. 4048 फिर से सक्षम प्राधिकारी द्वारा दिनांक 01.03.1984 को पारित आदेश और साथ ही राजस्व बोर्ड द्वारा दिनांक 05.05.1987 को पारित आदेश को चुनौती देते हुए एक नई याचिका दायर की, जो 1987 का मौलिक अधिकारिता मामला सं. 2550 रिट याचिका का विषय था, जिसे 01.11.1991 को गैर-अभियोजन के लिए खारिज कर दिया गया था। कि उच्च न्यायालय द्वारा 10.06.1994 को एक विस्तृत और अंतरिम आदेश पारित किया गया था और यह आदेश दिया गया था कि अधिकारी खाली अधिशेष भूमि का कब्जा अपने हाथ में ले सकते हैं, लेकिन अदालत से अगले आदेश तक भूमि की प्रकृति या चरित्र को नहीं बदलेंगे। इस स्तर पर, पुनरावृत्ति की कीमत पर यह देखा गया है कि पूरे मामले में, राज्य की ओर से मामला यह था कि उक्त एक्सपार्ट एड अंतरिम आदेश से पहले भी, अधिशेष भूमि का कब्जा पहले ही 25.04.1988 को तहसीलदार द्वारा लिया जा चुका था। राज्य की ओर से रिट याचिका का विरोध करते हुए एक प्रतिवाद दायर किया गया था जिसमें यह भी विशेष रूप से बताया गया था कि अधिशेष भूमि का कब्जा 25.04.1988 को तहसीलदार द्वारा लिया गया है। प्रत्यर्थी, तथापि, उक्त स्थिति पर विवाद करते हैं, उनका यह तर्क है कि वे हमेशा संपत्ति के कब्जे में रहे हैं और दिनांक 25.04.1988 का आदेश एक कागजी आदेश है और सही स्थिति को प्रतिबिंबित नहीं करता है। गुणों पर टिप्पणी किए बिना, यहां यह ध्यान रखना प्रासंगिक होगा कि दिनांक 25.04.1988 का आदेश अधिकारियों द्वारा सीमांकन का उल्लेख करता है और यह कि अधिशेष भूमि 02.04.1988 को एफ.आई सदर ॥ और अमीन श्री जी.सी पटनायक द्वारा ली गई थी, लेकिन यह तथ्य का प्रश्न होने के कारण, इसकी जांच और पता लगाना होगा। निरसन अधिनियम के अधिनियमन को ध्यान में रखते हुए इस तथ्य का पता लगाना आवश्यक है, जैसा कि नीचे देखा गया है।

2.5 इसके पश्चात् अधिनियम, 1976 को शहरी भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) निरसन अधिनियम, 1999 (जिसे इसके पश्चात् "निरसन अधिनियम, 1999" कहा गया है) द्वारा दिनांक 22.03.1999 की अधिसूचना द्वारा निरसित किया गया। उस संकल्प दिनांक 05.04.2002 द्वारा उड़ीसा राज्य ने शहरी भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) निरसन अधिनियम, 1999 को अपनाया।

2.6 इसके पश्चात् दिनांक 24.07.2002 की अधिसूचना/संप्रेषण की गलत व्याख्या करने और राज्य की ओर से इस मामले पर विचार किए बिना कि अधिशेष भूमि का कब्जा पहले ही 25.04.1988 को ले लिया गया है और केवल इस आधार पर कि अधिशेष भूमि के लिए प्रतिकर का भुगतान नहीं किया गया है, उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा सक्षम प्राधिकारी द्वारा दिनांक 01.03.1984 को पारित आदेश के साथ-साथ प्रथम अपीलीय न्यायालय-राजस्व बोर्ड द्वारा दिनांक 05.05.1987 को पारित आदेश को रद्द कर दिया है। उच्च न्यायालय ने यह भी कहा कि चूंकि अधिनियम, 1976 निरस्त हो गया है, इसलिए प्रत्यर्थियों - भूमि मालिकों की भूमि उन्हें वापस दी जाएगी।

2.7 उड़ीसा उच्च न्यायालय की खंड पीठ द्वारा पारित विवादित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट महसूस करते हुए, राज्य ने वर्तमान अपील को प्राथमिकता दी है।

3. हमने राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री सिबो शंकर मिश्रा और प्रत्यार्थियो की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता डॉ. मेनका गुरुस्वामी को सुना है।

4. संबंधित पक्षों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने और उच्च न्यायालय की खंड पीठ द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश और ऊपर वर्णित कालानुक्रमिक तिथियों और घटनाओं को देखने और विचार करने के बाद, हमारी राय है कि उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश कानून के साथ-साथ तथ्यों पर भी अस्थिर है। यह विवादित नहीं किया जा सकता है कि आक्षेपित निर्णय और आदेश में उच्च न्यायालय ने मामले के गुणागुण पर बिल्कुल भी विचार नहीं किया है और सक्षम प्राधिकारी द्वारा दिनांक 01.03.1984 को पारित आदेश और प्रथम अपीलीय न्यायालय-राजस्व बोर्ड द्वारा दिनांक 05.05.1987 को पारित आदेश को केवल इस आधार पर निरसित और अपास्त कर दिया है कि अधिनियम, 1976 निरसित किया गया है और अधिशेष भूमि के लिए प्रतिकर का भुगतान नहीं किया गया है। उच्च न्यायालय ने नोट किया है कि निरसन अधिनियम, 1999 को अपनाने वाले प्रस्ताव में यह घोषित किया गया है कि उन भूमि के लिए कोई मुआवजा नहीं दिया जाना चाहिए, जिनका कब्जा

अधिनियम, 1976 की धारा 10 (3) के तहत निहित होने के बाद राज्य सरकार द्वारा नहीं लिया गया है और उक्त अधिनियम के तहत शुरू की गई कानूनी प्रक्रिया को भी बंद कर दिया जाएगा।

4.1 कि ऐसा प्रतीत होता है और यद्यपि यह अनुच्छेद 8 से स्पष्ट नहीं है, जो कि एकमात्र पैरा है, जिसमें उच्च न्यायालय द्वारा कुछ टिप्पणियां की गई हैं, उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि चूंकि एक अंतरिम आदेश लागू था और रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान मुआवजे के भुगतान के संबंध में कुछ भी नहीं कहा गया है, इसलिए मामले को प्रतिप्रेषित करने का कोई उपयोगी उद्देश्य पूरा नहीं होगा क्योंकि अधिनियम, 1976 को निरस्त कर दिया गया है और परिणामस्वरूप, उच्च न्यायालय ने सक्षम प्राधिकारी के साथ-साथ प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित आदेशों को रद्द कर दिया है। तथापि, उच्च न्यायालय ने निरसन अधिनियम, 1999 की धारा 3 और 4 की उचित रूप से सराहना और विचार नहीं किया है। निरसन अधिनियम, 1999 की धारा 3 और 4 निम्नानुसार हैः –

"**3. बचत** — (1) मूल अधिनियम का निरसन प्रभावित नहीं करेगा –

(क) धारा 10 की उप-धारा (3) के तहत किसी भी खाली भूमि का अधिकार, जिसका कब्ज़ा राज्य सरकार या राज्य सरकार द्वारा इस संबंध में या सक्षम प्राधिकारी द्वारा अधिकृत किसी व्यक्ति द्वारा ले लिया गया है;

(ख) धारा 20 की उपधारा (1) के अधीन छूट देने वाले किसी आदेश या उसके अधीन की गई किसी कार्रवाई की वैधता, इसके विपरीत किसी न्यायालय के किसी निर्णय के होते हुए भी;

(ग) धारा 20 की उपधारा (1) के अधीन छूट देने की शर्त के रूप में राज्य सरकार को किया गया कोई संदाय।

(2) कहाँ-

(क) ऐसा समझा जाता है कि कोई भूमि मूल अधिनियम की धारा 10 की उपधारा (3) के अधीन राज्य सरकार में निहित है, लेकिन जिसका कब्जा राज्य सरकार या राज्य सरकार द्वारा इस निमित्त या सक्षम प्राधिकारी द्वारा विधिवत प्राधिकृत किसी व्यक्ति द्वारा नहीं लिया गया है; और

(ख) ऐसी भूमि के संबंध में राज्य सरकार द्वारा कोई राशि का भुगतान किया गया है

तब, ऐसी भूमि को तब तक पुनर्स्थापित नहीं किया जाएगा जब तक कि भुगतान की गई राशि, यदि कोई हो, राज्य सरकार को वापस नहीं की गई हो।

4 कानूनी कार्यवाही में कमी लाना - इस अधिनियम के प्रारंभ से ठीक पहले किसी न्यायालय, अधिकरण या अन्य प्राधिकारी के समक्ष लंबित मूल अधिनियम के अधीन किए गए या किए जाने वाले किसी आदेश से संबंधित सभी कार्यवाहियां समाप्त हो जाएंगीः

बशर्ते कि यह धारा मूल अधिनियम की धारा 11,12,13 और 14 से संबंधित कार्यवाहियों पर लागू नहीं होगी, जहां तक ऐसी कार्यवाहियां उस भूमि से संबंधित हैं, जिसका कब्जा राज्य सरकार या राज्य सरकार द्वारा या सक्षम प्राधिकारी द्वारा विधिवत अधिकृत किसी व्यक्ति द्वारा लिया गया है।

4.2 निरसन अधिनियम, 1999 की धारा 3 और 4 के निष्पक्ष पठन से यह स्पष्ट होता है कि निरसन अधिनियम, 1999 के प्रारंभ से ठीक पहले किसी न्यायालय, अधिकरण या अन्य प्राधिकारी के समक्ष लंबित मूल अधिनियम (अधिनियम, 1976) के अधीन किए गए या किए जाने वाले किसी आदेश से संबंधित सभी कार्यवाहियां समाप्त हो जाएंगी। निरसन अधिनियम की धारा 4 लागू नहीं होगी बशर्ते कि भूमि का कब्जा राज्य सरकार या राज्य सरकार द्वारा इस संबंध में या सक्षम प्राधिकारी द्वारा विधिवत अधिकृत किसी व्यक्ति द्वारा ले लिया गया हो। इसलिए, यदि अधिशेष भूमि/भूमि का कब्जा राज्य सरकार या राज्य सरकार द्वारा इस संबंध में या सक्षम प्राधिकारी द्वारा विधिवत अधिकृत किसी व्यक्ति द्वारा लिया गया है, तो उस मामले में, मूल अधिनियम, 1976 के तहत किए गए किसी आदेश से संबंधित कार्यवाहियां समाप्त नहीं होंगी, जिसका अर्थ है कि निरसन अधिनियम, 1999 उस भूमि के संबंध में उन सभी कार्यवाहियों को प्रभावित नहीं करेगा, जिसका कब्जा लिया गया है। इसलिए, निरस्तीकरण अधिनियम, 1999 की धारा 3 और 4 को ध्यान में रखते हुए कार्यवाही को समाप्त घोषित करने से पहले, इस बात पर विचार किया जाना चाहिए और यह तय किया जाना चाहिए कि अधिशेष भूमि/भूमि का कब्जा राज्य सरकार या किसी व्यक्ति द्वारा लिया गया है या नहीं। यदि यह पाया जाता है और अभिनिर्धारित किया जाता है कि अधिशेष भूमि का कब्जा ले लिया गया है, तो उस मामले में कार्यवाही को समाप्त घोषित नहीं किया जाएगा।

4.3 वर्तमान मामले में, आक्षेपित निर्णय और आदेश में, उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने 25.04.1988 को तहसीलदार द्वारा कब्जा किए जाने पर बिल्कुल भी विचार नहीं किया है और/या कोई विशिष्ट निष्कर्ष नहीं दिया है। इस पहलू पर कोई चर्चा नहीं है कि कब्जा तहसीलदार द्वारा लिया गया है या नहीं। ऐसा प्रतीत होता है कि केवल इस आधार पर कि मुआवजे का भुगतान नहीं किया गया है और अंतरिम आदेश चल रहा था, उच्च न्यायालय ने सक्षम प्राधिकरण के साथ-साथ प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा

पारित आदेशों को रद्द कर दिया है। हालांकि, उच्च न्यायालय ने इस तथ्य की उचित रूप से सराहना नहीं की है और इस पर विचार नहीं किया है कि मुआवजे के भुगतान का कब्जा लेने से कोई लेना-देना नहीं है। अधिनियम, 1976 के तहत मुआवजे का भुगतान और अधिनियम, 1976 की धारा 10 (3)/10 (5) के तहत जारी अधिसूचना के बाद कब्जा लेना, दोनों अलग-अलग और अलग हैं।

4.4 यह मानते हुए भी कि मुआवजे का भुगतान नहीं किया गया है, उस मामले में भी, यह नहीं माना जा सकता है कि कब्जा नहीं लिया गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने भी दिनांक 24.07.2002 के संकल्प/अधिसूचना को गलत तरीके से पढ़ा और गलत व्याख्या की है। राज्य सरकार द्वारा दिनांक 24.07.2002 के संकल्प/अधिसूचना द्वारा निम्नलिखित स्पष्टीकरण जारी किए गए थेः-

"इस प्रकार उक्त निरसन अधिनियम के तहत निर्धारित प्रावधानों के अनुसार, निम्नलिखित स्पष्टीकरण जारी किए गए हैं।

i) जिस भूमि पर सरकार ने कब्जा नहीं किया है, उसके लिए कोई मुआवजा नहीं दिया जाना चाहिए। शहरी भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) अधिनियम, 1976 की धारा 10 (3) के अधीन निहित किए जाने के पश्चात्। उक्त अधिनियम के तहत शुरू की गई कानूनी प्रक्रिया को भी बंद कर दिया जाएगा।

ii) जहां भूमि का कब्जा ले लिया गया है और मुआवजे का भुगतान नहीं किया गया है या आंशिक रूप से भुगतान नहीं किया गया है, वहां मुआवजे के भुगतान के लिए कदम उठाए जाने चाहिए।

iii) सरकार की निरंतरता। 5.4.2002 से छूट प्राप्त भूमि पर नियंत्रण की आवश्यकता नहीं है।

4.5 दिनांक 24.07.2002 के उक्त स्पष्टीकरण के अनुसार ऐसी भूमि के लिए, जिसका कब्जा शहरी भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) अधिनियम, 1976 की धारा 10 (3) के अधीन निहित होने के पश्चात् सरकार द्वारा नहीं लिया गया है, कोई प्रतिकर नहीं दिया जाना चाहिए और उक्त अधिनियम के अधीन आरंभ कीगई विधिक प्रक्रिया भी बंद की जानी है। खंड (ii) के अनुसार जहां भूमि का कब्जा ले लिया गया है और मुआवजे का भुगतान नहीं किया गया है या आंशिक रूप से भुगतान नहीं किया गया है, मुआवजे के भुगतान के लिए कदम उठाए जाने चाहिए। इसलिए, दिनांक 24.07.2002 के उक्त स्पष्टीकरण के अनुसार भी, जहां भूमि का कब्जा ले लिया गया है और मुआवजे का भुगतान नहीं किया गया है या पक्ष को भुगतान नहीं किया गया है, मुआवजे के भुगतान के लिए कदम उठाए जाने की आवश्यकता थी। यह नहीं

कहता है और/या स्पष्ट करता है कि यदि मुआवजे का भुगतान नहीं किया जाता है, तो कब्जा नहीं लिया गया है और/या अधिनियम, 1976 के तहत शुरू की गई कानूनी प्रक्रिया को बंद कर दिया जाएगा। यदि हम आक्षेपित निर्णय और आदेश के अनुच्छेद 7 और 8 पर विचार करते हैं, तो ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने दिनांक 24.07.2002 की स्पष्टीकरण अधिसूचना और यहां तक कि दिनांक 05.04.2002 के संकल्प को भी गलत तरीके से पढ़ा और गलत व्याख्या की है। यद्यपि दिनांक 24.07.2002 का संकल्प/स्पष्टीकरण दो भागों में यहाँ पुनः प्रस्तुत किया गया है, उच्च न्यायालय ने स्पष्टीकरण के भाग (ii) पर विचार नहीं किया है और उस पर विचार नहीं किया है, अर्थात् "जहां भूमि का कब्जा ले लिया गया है और क्षतिपूर्ति का भुगतान या आंशिक रूप से भुगतान नहीं किया गया है, क्षतिपूर्ति के भुगतान के लिए कदम उठाए जाने चाहिए।“

4.6 यहां तक कि उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने भी दिनांक 10.06.1994 के अंतरिम आदेश पर अपनी वास्तविक भावना में विचार नहीं किया है। दिनांक 10.06.1994 के एकतरफा अंतरिम आदेश में, उच्च न्यायालय ने आदेश दिया है कि अधिकारी खाली अधिशेष भूमि का कब्जा ले सकते हैं, लेकिन अदालत के अगले आदेश तक भूमि की प्रकृति या चरित्र को नहीं बदलेंगे।

4.7 इस स्तर पर, यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि राज्य के अनुसार, अधिशेष भूमि का कब्जा पहले ही 25.04.1988 को ले लिया गया था और पूरे मामले में राज्य की ओर से यह मामला था कि अधिशेष भूमि का कब्जा 25.04.1988 को ले लिया गया था। इस स्तर पर यह भी ध्यान देने की आवश्यकता है कि दिनांक 10.06.1994 का अंतरिम आदेश एकतरफा अंतरिम आदेश था। अंतरिम आदेश, जैसा कि कहा गया है, कब्जे के सवाल पर किसी भी तरह से निर्णायक सबूत नहीं है। यहां तक कि विवादित निर्णय और आदेश में, उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने कहा है कि चूंकि अधिनियम, 1976 को निरस्त कर दिया गया है, इसलिए मूल रिट याचिकाकर्ताओं की भूमि उन्हें वापस दी जाएगी। अर्थात्, यह कहा जा सकता है कि उच्च न्यायालय के अनुसार भी अधिशेष भूमि का कब्जा मूल रिट याचिकाकर्ताओं के पास नहीं था। जबकि, यह अवलोकन इस बात का निष्कर्ष नहीं है कि कब्जा लिया गया था या नहीं। जो भी हो, क्योंकि उच्च न्यायालय ने याचिका पर गुणागुण के आधार पर बिल्कुल भी विचार नहीं किया है और केवल उपरोक्त आधारों पर रिट याचिका को अनुमति दी है, उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित निर्णय और आदेश को कायम नहीं रखा जा सकता है और यह रद्द किए जाने और अलग किए जाने के योग्य है और रिट याचिका को नए सिरे से निर्णय लेने और ऊपर बताए गए पहलुओं पर विचार करने के लिए उच्च न्यायालय को भेज दिया जाना

चाहिए। हमारे द्वारा व्यक्त किए गए अवलोकन और विचार अस्थायी और प्रथम दृष्टया हैं। यह सवाल कि क्या अधिकार को आदिम होने के कारण लिया गया था, इसकी गहनता और गहनता से जांच की जानी चाहिए।

5. उपरोक्त और ऊपर बताए गए कारणों को ध्यान में रखते हुए, वर्तमान अपील सफल होती है। मूल अधिकारिता मामले संख्या 4048/1994 में उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 30.07.2009 को पारित किए गए आक्षेपित निर्णय और आदेश को इसके द्वारा रद्द कर दिया जाता है और अपास्त कर दिया जाता है। रिट याचिका पर नए सिरे से विचार करने के लिए याचिका को उच्च न्यायालय की खंड पीठ को भेज दिया जाता है। उच्च न्यायालय की खंड पीठ राज्य की ओर से इस मामले पर विचार करेगी कि अधिशेष भूमि का कब्जा पहले ही 25.04.1988 को तहसीलदार द्वारा लिया जा चुका था। यदि यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि प्रत्यर्थी निरसन अधिनियम के लाभ के हकदार नहीं हैं, तो उच्च न्यायालय बाद की रिट याचिका की स्थिरता पर राज्य की ओर से प्रस्तुतियों पर विचार करेगा।

उच्च न्यायालय को पश्चातवर्ती रिट याचिका की स्थिरता पर राज्य की ओर से प्रस्तुतियों पर भी विचार करना है क्योंकि पूर्ववर्ती रिट याचिका मूल अधिकारिता मामला संख्या 2550/1987 गैर-अभियोजन के लिए खारिज कर दी गई थी जिसमें सक्षम प्राधिकारी द्वारा दिनांक 01.03.1984 को पारित आदेश और राजस्व बोर्ड द्वारा दिनांक 05.05.1987 को पारित आदेश भी चुनौती के अधीन थे, जो मूल अधिकारिता मामला संख्या 4048/1994 होने के कारण पश्चातवर्ती रिट याचिका का भी विषय था। उच्च न्यायालय को पुनर्स्थापना आवेदन में पारित आदेश में उच्च न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों पर भी विचार करना है, जो मूल क्षेत्राधिकार मामले संख्या 2550/1987 को पुनर्स्थापित करने के लिए दायर मिसेलेनियस न्यायिक मामले संख्या 10/1994 हैं, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने पुनर्स्थापना आवेदन को इस अवलोकन के साथ खारिज कर दिया कि मूल रिट याचिकाकर्ता एक नई याचिका दायर कर सकता है, **यदि अनुमत हो**। इसलिए, उच्च न्यायालय की खंड पीठ को "यदि अनुमत हो" अभिव्यक्ति की व्याख्या और उस पर विचार करना होगा।

रिमांड पर, हम उच्च न्यायालय से अनुरोध करते हैं कि वह मूल क्षेत्राधिकार मामला संख्या 4048/1994 होने की रिट याचिका पर अंतिम निर्णय करे और उसका निपटान करे, जैसा कि उच्च न्यायालय की फाइल में बहाल करने का आदेश दिया गया था और हम उच्च न्यायालय से अनुरोध करते हैं कि वह आदेश प्राप्त होने की तारीख से छह महीने की अवधि के भीतर रिट याचिका पर तेजी से निर्णय ले और उसका निपटान करे। यह स्पष्ट किया जाता है और देखा जाता है कि संबंधित पक्षों के लिए उपलब्ध सभी दलीलों को खुला रखा जाता है, जिन पर कानून के अनुसार उच्च न्यायालय की खंड पीठ द्वारा विचार किया जाता है। यह भी देखा गया है कि उच्च न्यायालय उन मुद्दों सहित सभी मुद्दों पर निर्णय लेगा, जो ऊपर देखे गए हैं।

वर्तमान अपील को लागत के साथ तदनुसार अनुमति दी जाती है, जिसे आज से चार सप्ताह की अवधि के भीतर प्रत्यार्थियो द्वारा राष्ट्रीय कानूनी सेवा प्राधिकरण में जमा करने के लिए 50,000/- रुपये निर्धारित किया गया है। लंबित आवेदन, यदि कोई हों, तो उनका भी निपटारा कर दिया जाता है।

अंकित ज्ञान अपील की अनुमति दी गई।

दिब्या कुमारी की देखरेख में, अधिवक्ता सरवजीत सिंह द्वारा अनुवादित।